वेद, उपवेद और वेदोङ्गों का लक्ष्यार्थ

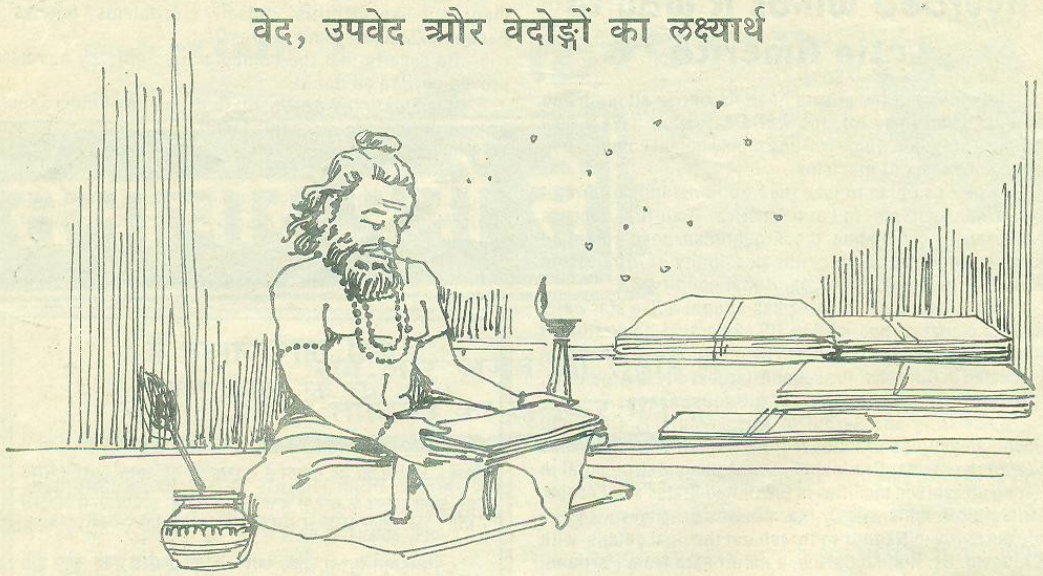

"संतों की उचिष्ट - उक्ति है मेरी वाणी।
समझूँ इसका भेद भला क्या मै अज्ञानी।।"

संसार के साहित्यिक - भण्डार में वैदिक साहित्य ऐसे ही चमक रहा है जैसे सूर्य चमकता है । जब सारा संसार - अज्ञान के अंधेरे में भटक रहा था तब वेदों का आर्षज्ञान मौखिक रुप से श्रुति के मान से पीढी - दर - पीढी सुरक्षित रहा, फिर वही दैवी - ज्ञान धर्म और संस्कार के रुप में आत्मा का अंग बना तदनन्तर वह इसी परंम्परा से साहित्य के रुप में जन्मा, जिन्हें हम वेद कहते हैं। वेद चार नामों से चार रुपों में बने जैसे १) ऋग्वेद २) यजुर्वेद ३) सामवेद और ४) अथर्ववेद। फिर इन वेदों का पूरक साहित्य बना तब कहीं जाकर उपवेद और वेद के उङ्गोपाङ्ग बने और अंत में बना वेदाङ्गँ जिनमें शिक्षा, व्याकरशा, निरुक्त, छन्द, कल्प और ज्योतिष तथा वेद के उपाङ्ग (इतिहास-पुराज्ञा, दर्शन, धर्माशास्त्र, और तंत्र) बने। वेदो के पूरक - साहित्य कैसे बने यह भी सुनो। ऋग्वेद का पूरक साहित्य आयुर्वेद बना, यजुर्वेद का पूरक साहित्य धनुर्वेद बना, सामवेद का पूरक साहित्य गान्धर्ववेद बना और अथर्ववेद का पूरक साहित्य अर्थशास्त्र नामक उपवेद बना। "चरणव्यूह" इसका प्रमाण इस प्रकार देता है :-

"तत्र वेदानामुपवेदाश्च त्वारोभवन्ति। ऋग्वेदस्यायुर्वेद उपवेदो, यजुर्वेदस्य धनुर्वेद उपवेदः, सामवेदस्य गान्धर्व वेदः अथर्ववेदास्यार्थशास्त्रं चेत्याह भगवान् व्यास : स्कन्धोवा।"

अर्थ : - वेदों के चार उपवेद हैं। ऋग्वेद का आयुर्वेद है यजुर्वेद का धनुर्वेद है, सामवेद का गान्धर्ववेद है और अथर्ववेद का अर्थशास्त्र उपवेद है।

वेद और वेद के अंगो से लेकर जिस विशाल साहित्य शास्त्र की रचना हुई है वह इतना विपुल, विराट और विशालकाय है, जिसके आगे समस्त संसार का साहित्य पंगु, निरीह और लघु है। इस बात का अनुमान केवल इसी वर्णन से लगाया जा सकता है कि अकेले ऋग्वेद के दस विभाग हैं जिन्हें मण्डल कहा जाता है और हर मण्डल में सूक्तों का संग्रह है। पहले में १९१, दूसरे मे ४३, तीसरे में ६२, चौथे में ५८, पाँचवे मे ८७, छटे में ७५ सातवें में १०४, आठवें में १०३ नवें में ११४ और सदवें में १९१ सूक्त हैं। ये कूल सूक्त १०२८ हुये। यही बात अन्य वेदो के बारे में भी है। यजुर्वेद दो भागों में विभक्त है। पहला भाग शुक्ल यजुर्वेद और दूसरा भाग गायन - परम्परा विस्तीर्ण हैं। और अथर्ववेद नौ भागों में विभक्त है १) पैपलाद २) शौणकीय ३) दोमोद ४) तोत्तायन ५) जामल ६) ब्रह्मपालास ७) कुनरवा ८) देवदर्शी; तथा १) चरणविद्या। तदनन्तर इसको भी दो भागों में रक्खा गया है औरव्य तथा काण्डिकेय - फिर काण्डिकेय भी पाँच भागों में विभक्त है अर्थात १) आपस्तम्म-बौधायन २) सत्यावाची ३) हिरण्यकेशी और ४) औधेय, आदि।

वेदों का यह परिचय इतना संक्षिप्त है जितना संक्षिप्त यह कहना है कि संख्याशास्त्रानुसार एक पल बराबर एक के हैं। वेदों का कलेवर युग युग में कम होता गया है तो भी यह संसार साहित्य से कई गुना बडा है। वेदो का जो संक्षिप्तीकरण वेदव्यास ने द्वापर के अंत में किया है, यदि उसको ही लें और एक मंत्र एक पैसे

के बराबर आँके तो यह धनराशि इतनी हो जायेगी जिससे आज की तारीख में सम्पूर्ण योरप खरीदा जा सकता है। अकेले वेद - व्यास का लेखन इतना विशाल है जितना कि हिन्द महासागर है जिसकी गहराई का आजतक कोई अनुमान नहीं लगा पाया है। पृथ्वी का जो मार्ग उचटकर आकाश में चन्द्रमा बनकर दिखाई दे रहा है वही भाग समुद्र ने ले लिया है। यौं चन्द्ररुपी वेद आकाश में आज भी चमक रहे हैं।

।। विश्व साहित्य में वेद ।।

विश्व के विशाल साहित्य में हिन्दुओं के वैदिक साहित्य की कितनी महानता है इसके लिये मुझे खगोलीय-विज्ञान का यह सत्यांश सुनाना होगा। यह सत्यांश इस प्रकार है: -

"हमारा सूर्य एक मामूली सा सितारा है। हमारी आकाशगंगा में मौजूद अरबों-खरबों सितारों में से एक है जो कि हमसे सिर्फ १५०० लाख किलोमीटर दूर है जबकि अन्य सितारे अरबों किलोमीटर दूर हैं इसी कारण हमें वे तारे से दिखलाई देते हैं। हम सिर्फ ६००० तारे ही देख सकते हैं वह भी दूरबीन द्वारा, इनमें 'सिरियस' या लुब्धक तारा (जिसे 'डॉग स्टार' भी कहते हैं) सर्वाधिक चमकीला है जो हमसे १ प्रकाशवर्ष की दूरी पर है। प्रकाशकिरणें जो एक सैकेण्ड में ३,००,००० किलोमीटर की दूरी तय करती हैं एक वर्ष में १०,०००,०००,०००,००० किलोमीटर दूर पहुँचती हैं। सिरियस का एक साथी तारा भी है जिसे 'सिरियस-बी' कहते हैं, जो कि बिना दूरबीन की सहायता के देखा भी जा सकता है। अन्तरिक्ष में इसके बाद सबसे चमकीला तारा है कॅनोपस जो अपने प्रखर प्रकाश से धरती के नाविकों व अन्तरिक्षयानों का भी मार्गदर्शन करता है।

हमारे सबसे करीब का तारा है - अल्फा सेटॉरी (जो सिर्फ ४ प्रकाशवर्ष दूर है) सृष्टि का तीसरा सर्वाधिक चमकीला तारा है। चौथा सर्वाधिक चमकीला तारा है - जो कि चमकीले तारो की संख्या में १९ नम्बर पर है। इसका तापमान १०,००० सेल्सियस है। इसका आकार हमारे सूर्य से २५ गुना बडा है।"

अब यदि हमारा सूर्य विश्व-साहित्य है तो हमारे वेद इस प्रकार हुये - ऋग्वेद लुब्धक तारा है, यजुर्वेद कॅनोपस तारा है, सामवेद अल्फा सेटॉरी तारा है तथा अथर्ववेद डेबेनतारा है। विश्व के साहित्य-समूह के आगे वेदो की विराटता दिखलाने के लिये मेरे पास यही एक उपयुक्त - दृष्टांत है क्योंकि वेद अपनी प्रभा से आजतक चमक रहे हैं।

हमारी वेदत्रयी के सामने अथर्ववेद की गरिमा को बताने के लिये मुझे यह कहना पडेगा कि यदि डेबेन आकाशगंगा में रहकर भी हमारे पास रिक्सक आता तो उससे हमारी दूरी १,००० प्रकाशवर्ष होती। यही विश्वसाहित्यकारों की बुध्दि और हमारे वेदों के ज्ञान की दूरी है।

।।वैदिक ग्रन्थों का लक्ष्य ।।

वैदिक साहित्य में वेदों के महत्व को आजतक कदाचित ही कोई विद्वान आँक पाया हो। जिन्होंने वेदो के अध्ययन और अध्यापन में अपनी तमाम जिन्दगी लगा दी है वे भी वेदों का महत्व नहीं आँक पाये हैं। अचिर में चिर कैसे आक सकता है? दिव्य का प्रकाश भला अदिव्य-मस्तिष्क कैसे सम्हाल सकता है? क्या एक चींटी सारे समुद्र को पार कर सकती है? क्या एक कीडा हिमाद्रि को पार कर सकता है? "रघुवंश" जैसे नरकाव्य को लिखने से पहले कविकुल चुडा मणि महाकवि कालिदास को यह कहना पड़ा था -

"क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्।।"

(रघु. १.२)

अर्थात, कहाँ तो सूर्यवंश और कहाँ मेरी यह अल्पविषयज्ञ-

बुध्दि? एक उडुप (बेड़ा) की सहायता से मैं मोहवश दुस्तर सागर को पार करना चाह रहा हूँ।'

"मंदः कवियशः प्रार्थी गमिष्याम्युपहास्यतां।
प्रांशुलभ्ये फले लोमादुद्बाहुरिव वामनः॥"

(रघु. १.३)

अर्थात मंद होकर भी कवि यश की इच्छा करने वाला मैं अवश्य उपहास का पात्र बनूँगा, जैसे कि एक बौना जो लोभ वश केवल दीर्घकाय व्यक्ति को प्राप्त हो सकने वाले फल की और हाथ बढाता है।'

कालिदास ने इतना होने पर भी रघुवंश के राजाओं का वर्णन किया है। मैने भी अपनी अत्यन्त तुच्छ-बुध्दि के होने पर भी वेदों की विराटता के एक अंश को कहने का साहस किया है अतः विद्वान मेरी त्रुटियों को क्षमा करें।

अब मैं एक एक वेद के लक्ष्य को एक एक पंक्ति में कहूँगा जो मेरी कविता की एक उत्कण्ठामात्र है। मैने वैदिक साहित्य को इतना ही समझा है, बस।

॥ ऋग्वेद का लक्ष्य ॥

"यः परानन्ददः स्वात्मा तं त्वा वयं यजामहे।
इत्याहुतो न विश्वात्मा ऋचा हौत्रेण किं तदा॥"

- अर्थ -

जिस स्वात्मदेव को विद्वान लोग परमानन्द का देनेवाला बताते हैं उस तुझ आत्मदेव का (संसार के सम्पूर्ण विषयों की आहुति देकर) हम मुमुक्षगण यजन करते हैं। यदि इस प्रकार की सर्वाहुति से उस जगदन्तरात्मा को किसी ने तृप्त न कर पाया तो उस हौत्र-कर्म से (जिसमें ऋचाओं की ही प्रधानता है) मुमुक्षुओं का क्या प्रयोजन सिध्द होगा?

मुमुक्षु के लिये तो सिर्फ आत्मज्ञान का प्रतिपादन करने वाली ऋचायें ही उपयोगी हो सकती हैं।

॥ यजुर्वेद का लक्ष्य ॥

"लोहिता धवला कृष्णा प्रहेतुरजा यदि।
नोपलब्धा ब्रह्मसत्रे यजुषाध्वर्यवेण किम् ॥"

- अर्थ -

लोहिता (रजोगुणवाली) धवला (सत्वगुणवाली) कृष्णा (तमोगुणवाली) (तथा इसी क्रमानुसार विश्व की उत्पत्ति प्रकाश और आवरण करनेवाली) जगज्जननी अजा माया को यदि किसी ने ब्रह्मसत्र में नष्ट या बाधित न कर डाला हो तो यजुर्वेद के मन्त्रों से निष्पन्न हुये आहवर्यवकर्म से ही मुमुक्ष का क्या उध्दार होगा?

॥ सामवेद का लक्ष्य ॥

"छान्दोग्येनोपनिषदा प्रेमगद्गदया गिरा।
साम्ना गीतं न चेद् ब्रह्म सामोद्गात्रेण किं तदा॥

- अर्थ -

छान्दोग्यउपनिषद द्वारा प्रेमगद्गदवाणी से यदि किसी ने ब्रम्ह का गान न किया तो सामवेदविहित औद्गात्र - कर्म से भी मुमुक्ष का क्या प्रयोजन सिध्द होगा। मुमुक्षुओं को तो अनात्मविषयक साम को छोड़ कर सिर्फ आत्मविषयक साम का ही गान करना चाहिये)

आजकल तो ब्रह्मरहित साम को कामशास्त्र का अंग माना जाता है। फिल्मी-संगीत इसका ज्वलंत उदाहरण है। पोप-म्यूजिकभी कामशास्त्र है।

॥ अथर्ववेद का लक्ष्य ॥

"आथर्वणी ब्रह्मविद्या पिप्पलादमुखाच्युता।
चमत्कृता न हृदये किं फलं तह्यर्थवत्रिः॥"

- अर्थ - :- महर्षि दधीचि के सुपुत्र मुनि पिप्पलाद की कही हुई, आथर्वणी ब्रह्मविद्या का यदि किसी के हृदय में चमत्कार न हुआ हो तो अनात्मविषयक अथर्वण प्रयोगों से मुमुक्ष का क्या प्रयोजन सिध्द होने वाला है?

अब दो-तीन उपवेदों की लह्यसिद्धि पर भी विचार कर लेना चाहिये यो कि उपवेद भी वेदों से कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। वह भी वेदभाग हैं।

॥ आयुर्वेद का लक्ष्य ॥

"ज्ञानामृतं न चेत्पीतममृतत्वं न साधितम्।
मृत्युरेव पुनः प्राप्त आयुर्वेदो निरर्थकः॥"

- अर्थ -

यदि किसी ने (जरामरणादि को हटाने वाले) ज्ञानरुपी अमृत का पान न किया और अमृतत्व को सिध्द न कर पाया हो और अन्त में मृत्यु के ही वश में फँसना पड़ गया हो तो (ऐसी दयनीय परिस्थिति) में आयुर्वेद (शास्त्र के अभ्यास) का क्या प्रयोजन हुआ?

॥ धनुर्वेद का लक्ष्य ॥

"प्रणवेनैव धनुषा प्रबोधन शरेण च ।
लक्ष्यं ब्रह्म न चेद्विद्धं धनुर्वेदो निरर्थकः॥"

- अर्थ - प्रणय (ओंकार) रुपी धनुष पर ज्ञानरू ण चढ़ाकर अपने ब्रह्मरुपी (अन्तिम) लक्ष्य का यदि कि वद्य न कर डाला हो तो इस लौकिक धनुर्वेद से मुमुक्ष का क्या प्रयोजन सिध्द होगा?

रसिक बिहारी मंजूल, दिल्ली

शः)

वेद उपवेद और वेदाङ्गोका लक्ष्यार्थ

(गतांक से आगे)

॥ गान्धर्ववेद का लक्ष्य ॥

आत्मा कलेन गीतेन गान्धारेण (गान्धर्वेण) स्वरेण हि ।
न चेद् गन्धर्ववद्गीतो गान्धर्वेण कृतं किमु ॥"

- अर्थ -

गान्धर्व स्वरों में सुमधुर गानों से गन्धर्वो की तरह यदि किसी ने अपने सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मदेव का गान न किया तो इस (अनात्मविषयक) गान्धर्व वेद के अभ्यास में वृथा समय खोने से क्या?

॥ अर्थवेद का लक्ष्य ॥

अनर्थाः सर्व एवार्थाः सदर्थः परमार्थदृक ।
परमार्थो न लब्धश्चेद् दर्थशास्त्रं निरर्थकम् ॥

- अर्थ -

संसार के (धर्म, अर्थ तथा काम नामक) सम्पूर्ण पदार्थ (दुःखास्पद होने से) अनर्थ ही होते हैं, परमार्थ - ब्रह्म का ज्ञान ही सत् अर्थ कहलाता है। यदि किसी को उसी परमार्थ का लाभ न हुआ हो तो यह लौकिक अर्थशास्त्र निरर्थक ही है।

वेदो और उपवेदों के बाद, अब वेदाङ्गों पर भी यत्किंचित विचार कर लिया जाय तो उचित ही रहेगा। आर्य - परम्परा में लक्ष्यहीन - साहित्य को सम्मान नहीं दिया जाता है। साहित्य सर्वदा सौद्देष्य होना चाहिये। कहा भी गया है न् -

" केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिये ।
उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिये ॥"

श्रुति प्रसिध्द है -

"शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरूक्तं छन्द एव च ।
ज्योतिषं च षडङ्गानि तेषामेव विनिर्णय : ॥"

- अर्थ -

शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, छन्द तथा ज्योतिष, यह षैः वेदाङ्गँ हैं। इनपर विचार किया जाता है।

॥ शिक्षा का लक्ष्य ॥

शुध्दो विदेह भावेन शिक्षितः शिक्षया यया ।
सा शिक्षा यदि न प्राप्ता शिक्षया शिक्षितं किमु ॥

- अर्थ -

जिसमहावाक्योपदेशरूपी - गुह्य शिक्षा को पाकर प्राणी देहाधिबन्धनों से छूटकर शुद्ध न हो जाय उस शिक्षा को यदि किसी ने प्राप्त किया तो इस स्पार्णस्वरादि के स्थानादि बताने वाली यह पाणिनि की शिक्षा से क्या सीखा?

॥ कल्पसूत्र का लक्ष्य ॥

"कल्पानां प्रथमः कल्पो निर्विकल्पमिंद न चेत् ।
विकल्पसंकल्पभयै : कल्पसूत्रै : किमर्जितम् ॥"

- अर्थ -

कर्म और उपासनाओं को बताने वाले कल्पसूत्रों या सकल कल्पनाओं का प्रथम कारण जो यह निर्विकल्प

आत्मचैतन्य रूपी कल्प है उसको यदि किसी ने साक्षात नहीं कर लिया तो हम समझते हैं कि विकल्प और संकल्पों से परिपूर्ण कल्पसूत्रों को जानने से ही क्या प्रयोजन सिद्ध हुआ?

अर्थात्

कल्पको येन कल्पेन ब्रह्मभूयाय कल्पते ।
स कल्पो नैव क्लृप्तश्चेत्कल्पसूत्रं निरर्थकम् ॥

- अर्थ -

कल्पकुशल - मनुष्य जिस कल्पना से ब्रह्मभाव को प्राप्त कर लेता है वह (तारक) कल्प यदि किसी ने प्राप्त न किया तो यह कल्पसूत्र बेकार ही है।

॥ व्याकरण का लक्ष्य ॥

पदव्युत्परिन्वेष्या महावाक्यार्थबुद्धये ।
स एव यदि न ज्ञात स्तर्हि व्याकरणेन किम् ॥

- अर्थ -

महावाक्यों का अर्थज्ञान हो जाने के लिये ही (व्याकरण द्वारा) पदों का ज्ञान कर लेना जरूरी होता है यदि उन महावाक्यों के अर्थ को ही किसी ने नहीं समझा तो व्याकरण पढने का प्रयास बेकार ही रहा।

क्योंकि

॥ येनेदं व्याकृतं विश्वं तदेव व्याकृतं न चेत् ।
बृहन्नो वेति यत्तर्हि तद्वि व्याकरणेन किम् ॥

- अर्थ -

जिस परब्रह्म ने प्रत्यक्ष दिखने वाले इस सारे संसार के विविध आकारों का निर्माण किया है, यदि उसी बृहत्त तत्व को किसी ने न जाना हो तो व्याकरणशास्त्र के अभ्यास से भी मुमुक्षु का क्या प्रयोजन सिद्ध होगा?

क्योंकि

यतस्तु परिनिष्पन्नैः शब्दैः शास्त्रान्मुहुर्मुहुः ।
हे यादेयौ न विज्ञातौ तर्हि व्याकरणेन किम् ॥

- अर्थ -

जिस शब्द शास्त्र से सिध्द हुये शब्दों (या नामों) की सहायता से हेय (प्रपंच) तथा उपादेय (कूटस्थ असंग आत्मा) को न जान लिया तो व्याकरण शास्त्र के अभ्यास से मुमुक्षु का क्या प्रयोजन सिद्ध हुआ।

॥ निरूक्त का लक्ष्य ॥

निरूक्तं चिदवस्थानं निरुक्तं बोध नं चित : ।
तन्निरूक्तं न चद्वैद निरुक्तस्य किमुक्तिभि : ।

- अर्थ -

चिन्मात्ररूप - आत्मा की स्वरूपस्थितिनामक अवस्था को निरूक्त कहते हैं । क्योंकि उस अवस्था का वर्णन उक्ति (वचनों) के बाहर की बात होती है) चिन्मात्ररूप - आत्मा का उपदेश भी निरूक्त कहलाता है (क्योंकि वहां से वाणियाँ लौट आती हैं या उसका वर्णन करने में वह अपने को असमर्थ पाती हैं उस अवस्था में पहुँचकर चुपचाप हो जाना पडता है। उक्त दोनों प्रकार के निरूक्तों को यदि किसी ने न जाना तो इस (यास्क प्रणीत) निरूक्त की उक्तियों से मुमुक्षुओं का क्या प्रयोजन सिध्द होगा?

॥ छन्द का लक्ष्य ॥

तच्छन्दो यदि न ज्ञातं स्वच्छन्दो येन खेलति ।
यरस्तजन्मभोपेतैरछन्दोभिः किं प्रयोजनम् ॥

- अर्थ -

जीवन्मुक्त - लोग जिस स्वच्छन्द अर्थात् स्वाभाविक समभाव - रूप स्थिति में पहुँचकर (अबोध बच्चों की तरह) सहज बर्ताव करने लगते हैं (जिस स्थिति के प्रताप से स्वाधीनता का उत्तमोत्तम आनन्द मिल जाता है) स्वच्छन्दता को सिखानेवाले उस छन्द को यदि किसी ने न जाना तो यगण, रगण, सगण, तगण, जगण, मगण, नगण, और मगण वाले (आर्या आदि) छन्दों के विचार से मुमुक्षुओं का भला क्या प्रयोजन सिद्ध होगा?

॥ ज्योतिष का लक्ष्य ॥

ज्योतिषा येन सूर्यादि ज्योतिर्भाति न वेत्तितत् ।
यदि येन तदा तेन ज्योर्तिग्रन्थेन किं कृतम् ॥

- अर्थ -

जिस स्वयंप्रकाश ज्योतिस्वरूप आत्मदेव की कृपा से -

लौकिक सूर्य, चन्द्र, अग्नि तथा वाणी आदि ज्योतियाँ तक प्रकाशित हो जाती हैं वह पवित्र आत्मस्वरूप ज्योति जिस ज्योतिग्रन्थ से न जानी जा सके तो बताओ (केवल लौकिक ज्योतियों को बताने वाले) ज्योतिष - शास्त्र ने भी मुमुक्षुओं का क्या उपकार किया?

॥ सिंहावलोकन ॥

अनादि काल से वैदिक - साहित्य जिसमें वेद, उपदेव, वेदाङ्ग, रामायण, महाभारत, पुराण, धर्मशास्त्र, तन्त्रशास्त्र ब्राह्मण ग्रन्थ, दर्शनशास्त्र, सम्प्रदायगत - साहित्य जिसमें जैन बौद्ध चार्वाक् वेदान्त परम्परा का स्मार्त्त व स्त्रोत - साहित्य है, भागवत तथा वैष्णवमत, शैव, शाक्त, लिंगायत, योग, गाणपत्य, सौर, उपनिषद, स्मृतियाँ, संहितायें, चौसठकलायें तथा महाविद्यायें शामिल हैं, अनेक ऐसे झंझावात झेल चुका है जिनसे सभ्यताओं का समूल नाश हो जाता है खासकर भारतीय जीवन में, जो हमेशा ही आक्रान्ताओं के कत्लेआम का निशाना रह चुका है. वैदिक साहित्य आजभी ज्यों का त्यौं सुरक्षित खडा है। बर्बर - मुसलमानों ने नालन्दा तथा तक्षशिला जैसे विश्वविख्यात विश्वविद्यालयों का विशाल पुस्तकालय जला डाला ताकि सदियों तक उनकी बेगमों के गुसलखाने का पानी गरम बना रहे तो भी वैदिक - साहित्य आजतक सुरक्षित है। वेदों का कई बार लोप हुआ, अनुसंधान हुआ, स्थापना हुई और फिर जाकर प्रचार प्रसार हुआ है। मत्स्यपुराण की एक कथा के अनुसार यह कहा जाता है कि वेदव्यास द्वारा वेदों का पुनरूद्धार द्वापर के अंत की क्रिया है। पहली क्रिया नहीं है। कुछ अजब नहीं कि सतयुग के दीर्घकाल में कई कई बार वेदों का उद्धार हुआ हो। पुराणों की मत्स्यावतार कथा के अतिरिक्त महाभारत के शल्य - पर्वमेंभी एक कथा कही जाती है कि एकबार जब अवर्षण के कारण ऋषिमुनि देश से बाहर बारह बरस तक रह कर जब वेदों को भूल गये थे तब दधीचि और सरस्वती के पुत्र सारस्वक ऋषि ने भी अपने से कहीं अधिक बूढे ऋषियों को फिर से वेद पढाया था। फिर दत्तात्रेय ने वेदोंका उद्धार किया था। अरे दूर जाने की जरूरत ही क्या है? आज से पाँच सौ वर्ष पूर्व सायणाचार्यादि ने वेदोद्धार का काम किया था और सायण के बाद लोग वेद का नाममात्र ही जान पाये थे कि दक्षिण में घोखने की थोडीसी विधि के अतिरिक्त जनता वास्तविक वेदाध्ययन भूल ही गयी थी। फिर आज से सौ साल पहले स्वामी दयानन्द ने वेदोद्धार किया। मेरी दृष्टि में जो काम वेदव्यास ने किया था वही काम दयानन्द ने कर दिखाया था।

यह सब उद्योग इसलिये हुआ था कि वैदिक साहित्य सौद्देश्य था। उसका एक लक्ष्य था - आत्मसिध्दि और परमात्मा की प्राप्ति। जीवन का अभ्युदय और लोकजीवन की स्थापना। वेद ज्ञान के प्रतीक हैं। लक्ष्यसिध्दि के सोपान हैं। जो ज्ञान श्रुति के रूप में सदियों से प्रचलित रहा था वही ब्रह्म ज्ञान वेदों के रूप में कैसे अद्‌भूत हुआ इसकी कथा मत्स्यपुराण में सृष्टि के आरम्भ में वेदोत्पत्ति की बात इस प्रकार बताई गयी है -

"तपश्चचार प्रथमं अमराणां पितामह : ।
आविर्भूतास्ततो वेदा : साङ्गोपाङ्गपदक्रमा :॥

अनन्तरश्च वक्त्रेभ्यो वेदोस्तत्र विनि : सृताः ॥

(देखिये : मात्स्ये, अ. ३ श्लो. २-४)

अर्थात ब्रह्मा के (चारो) मुखों से (चार) वेद निकले।

॥ निष्कर्ष ॥

वेद विश्व के प्रदीप हैं जिनके आलोक में मानव जाति ने युग युग प्रकाश पाया है। मैने अपने प्रथमकाव्यग्रन्थ "सतवंती का स्वर्ग" में ठीक ही तो लिखा था -

"वेद पुराण प्रदीप हैं, महापुरूष गुरू - रूप ।
जो इनसे सीखे न कुछ, वह है अंधा - कूप ॥३३०॥

वेद पुराण उपनिषद् स्मृति, हैं वाणी के रन्ध्र ।
सतवंती का स्वर्ग भी, है ऐसा एक ग्रन्थ ॥ १००१॥

■ **रसिक बिहारी मंजुल**
दिल्ली